16.30 hrs.

RESOLUTION RE: DEVNAGARI AS COMMON SCRIPT FOR ALL REGIONAL LANGUAGES

श्री प्रकाशवीर शास्त्री (गुड़गांव): उपाध्यक्ष जी, देवनागरी लिपि को सभी प्रादेशिक भाषाओं की सामान्य लिपि के रूप में स्वीकार किया जाए जिस से कि, वे एक दूसरे के अधिक निकट आ सकें, मैं इस प्रस्ताव को उपस्थित करता हूं ।

प्रस्ताव को उपस्थित करते हुए मैं इस के सम्बन्ध में कुछ तथ्य और जानकारी भी देना चाहता हूं । भारत में प्रचलित बोलियों को छोड़ कर संविधान की मान्यता के अनुसार इस समय १४ भाषायें प्रचलित हैं । प्रायः सभी भाषाओं के पास अपने अपने साहित्यिक भण्डार हैं जो न केवल उन भाषाओं के लिए अपितु भारत के लिए भी गौरव का विषय है । संस्कृत, बंगला, तमिल, तेलेगू, मराठी और मलयालम भाषाओं के साहित्य तो इतने समृद्ध हैं जिसे देख कर किसी भी राष्ट्र को अपने ऊपर गौरव हो सकता है । परन्तु दुर्भाग्य से इन भारतीय भाषाओं के साहित्यिक भण्डारों का समान रूप से सब लाभ उठा सकें, इस में एक छोटी सी दीवार लिपि की मध्य में आ गई है जिस से छोटे छोटे क्षेत्रों में वे भाषायें सिमट कर रह गई हैं । स्वाधीनता से पूर्व जो शासन इस देश में था वह इस विषय में उदासीन ही रहा। वह स्वाभाविक भी था क्योंकि विचारों के आदान प्रदान से भारतीयों की सामाजिक और राजनीतिक चेतना का जागृत होना उस के लिए किसी भी रूप में अभीष्ट नहीं था ।

यद्यपि उस समय भी स्वामी दयानन्द सरस्वती, बंकिम चन्द्र चटर्जी, गोपालकृष्ण गोखले, महात्मा गांधी, लोकमान्य तिलक रवीन्द्र नाथ ठाकुर, जस्टिस शारदा चरण मित्र और मद्रास के जस्टिस कृष्णास्वामी अय्यर, आदि महानुभावों ने इस दिशा में प्रयास भी किए परन्तु क्योंकि उस समय शासन दूसरे हाथों में था इसलिए वे प्रयास जितने सफल होने चाहिये थे, उतनी सफलता उन प्रयासों को नहीं मिल सकी ।

स्वामी दयानन्द सरस्वती ने गुजराती होते हुए भी अपने सभी ग्रन्थों की भाषा हिन्दी और लिपि देवनागरी स्वीकार कर यद्यपि व्यावहारिक रूप से १८७५ में एक बहुत बड़ा पग इस दिशा में उठाया था परन्तु आन्दोलन के रूप में यह आन्दोलन बंगाल से चला । जस्टिस शारदा चरण मित्र ने एक लिपि विस्तार परिषद् नामक संस्था की स्थापना की और उसकी ओर से "देवनागर" नाम का एक पत्र भी निकाला गया । १९१० में जब प्रयाग में कांग्रेस अधिवेशन हुआ था तो उसी समय जस्टिस शारदाचरण मित्र के आग्रह पर टंडन जी ने नागरी सम्मेलन का भी आयोजन किया जिस के अध्यक्ष श्री कृष्णास्वामी अय्यर थे। श्री कृष्णास्वामी अय्यर अपने समय के प्रसिद्ध न्यायशास्त्री और उद्भट विद्वान् थे । श्री कृष्णास्वामी अय्यर ने नागरी सम्मेलन के अध्यक्ष पद से भाषण देते हुए उस समय जो कुछ सुझाव दिये थे उनको राजभाषा आयोग के प्रतिवेदन में बड़े ही सम्मान के साथ लिखा गया है । मैं उचित समझूंगा कि उनकी कुछ पंक्तियों को इस समय सदन के सम्मुख उपस्थित करूं । श्री कृष्णास्वामी अय्यर ने नागरी लिपि सम्मेलन की अध्यक्षता करते हुए कहा था :—

> "एक सामान्य लिपि, जबकि देश में २० की संख्या में लिपियां हों और एक सामान्य भाषा की बात, जबकि देश में १४७ भाषायें बोली जाती हों, पहली दृष्टि में एक असम्भव स्वप्न मालूम होती है । किन्तु कुछ लोग हम में से ऐसे भी हैं, जिन्होंने इस समस्या पर तुच्छ क्षुद्रताओं से ऊपर उठ कर उदात्त भावना के

[श्री प्रकाशवीर शास्त्री]

साथ विचार किया है और वे इस परिणाम पर पहुंचे हैं कि आज जो स्वान मालूम होता है और जो कि आज केवल भविष्य की आशा मात्र प्रतीत होता है, वह कल, और सम्भव है कल नहीं तो परसों, यथार्थ सत्य हो, और मूर्तरूप में हम उसको देखें। और इसके अतिरिक्त हम को सदा यह बात ध्यान में रखनी चाहिये कि परमात्मा के शब्द कोष में "असम्भव" शब्द है ही नहीं।"

श्री अय्यर ने अपने भाषण में आगे चल कर यह भी कहा :—

> "मेरा यह भी विचार है कि बहुत सी लिपियों के अतिरिक्त, जो कि वे सीखते हैं, वे एक सामान्य लिपि भी सीख सकते हैं जो कि सारे देश भर में समझी जाती हो। मैं आपसे निवेदन करना चाहता हूं कि आप क्षण भर इस बात पर विचार करें कि विभिन्न लिपियों का व्यवहार करने से, हम कितनी बड़ी हानि उठा रहे हैं क्योंकि वे जनता के एक भाग को दूसरे से पृथक् करती हैं। भाषा अलग अलग भी हो, किन्तु यदि उनकी लिपि एक ही हो, तो लोगों को शब्दों, वाक्यों, अभिव्यक्ति के ढंग की समानता के कारण अपनी भाषा के अतिरिक्त अन्य भाषाओं को समझना भी सरल होगा।"

अध्यक्ष पद से भाषण करते हुए श्री कृष्णास्वामी अय्यर ने अन्त में एक और भी आवश्यक बात कही :—

> "पुनः मैं आप से यह निवेदन करना चाहता हूं, क्या आज यह आवश्यक नहीं है कि एक भाषा का साहित्य दूसरे को दिया जाए, विशेषतः यह देखते हुए कि हमारी अनेक देशी भाषायें बहुत से प्रसिद्ध लेखकों द्वारा समृद्ध बनाई गई हैं।"

श्री कृष्णास्वामी अय्यर ने जिस समय अपना यह अध्यक्षीय भाषण कांग्रेस अधिवेशन के समय दिया, उससे एक बहुत बड़े अनुकूल वातावरण का निर्माण हमारे देश में हुआ। लेकिन इससे पूर्व भी बनारस में १९०५ में नागरी प्रचारिणी सभा में लोकमान्य बालगंगाधर तिलक ने भी इस सम्बन्ध में अपने कुछ सुझाव दिये थे और उनको देते समय काशी में उस समय कहा था कि हमारी वर्णमाला में प्रत्येक ध्वनि के लिए एक वर्ण है और प्रत्येक वर्ण के लिये एक ध्वनि है। अतः मैं यह समझता हूं कि इसके बारे में कोई मतभेद नहीं हो सकता कि हमें कौनसी वर्णमाला अपनानी चाहिये। देवनागरी ही सब से अधिक उपयुक्त वर्णमाला है।

अब प्रश्न यह है कि विभिन्न प्रदेशों में वर्णमाला के अक्षरों को लिखने में किस सिद्धान्त अथवा स्वरूप को अपनाया जाए। मैं पहले ही कह चुका हूं कि केवल प्राचीनता के आधार पर यह प्रश्न हल नहीं किया जा सकता। लोकमान्य बालगंगाधर तिलक के अतिरिक्त मैं आपको महात्मा गांधी के शब्द भी देवनागरी लिपि के सम्बन्ध में कुछ सुनाना चाहता हूं। डा० जेड० ए० अहमद ने अपनी पुस्तक "नेशनल लैंगुएज फार इण्डिया" में गांधी जी की सम्मति देते हुए उन्होंने लिखा है कि जिन विभिन्न भाषाओं का जन्म संस्कृत से हुआ है अथवा जिनका संस्कृत से घनिष्ठ सम्बन्ध है उनकी एक ही लिपि होनी चाहिये और वह लिपि देवनागरी लिपि ही हो सकती है। एक प्रान्त के लोगों के लिये दूसरे प्रान्तों की भाषायें सीखने में विभिन्न लिपियां अनावश्यक रुकावटें पैदा करती हैं। यूरोप में भी जो कि एक राष्ट्र नहीं है, सामान्यतः एक ही लिपि अपनाई गई है तो फिर भारत को भी जो कि एक राष्ट्र होने का दावा करता है, और एक राष्ट्र है भी, क्यों न एक लिपि अपनानी चाहिये।

अभी कुछ समय पहले की घटना है कि जब असम प्रान्त में भाषाई उपद्रव उठ खड़े हुए थे तो उसके कुछ दिनों पश्चात् हमारे प्रधान मन्त्री जी असम का भ्रमण करने के लिए गये थे । वहां पर भाषा समस्या पर अपने विचार व्यक्त करते हुए जहां उन्होंने और बहुत सी बातें कहीं वहां एक बात उन्होंने यह भी कही कि क्या ही अच्छा हो भाषाओं के पारस्परिक इन विवादों को समाप्त करने के लिए और दूसरी भाषाओं को निकट लाने के लिए देवनागरी को एक सामान्य लिपि के रूप में स्वीकार कर लिया जाए । हमारे राष्ट्रपति जी ने भी देश में कई स्थानों पर भाषण देते हुए देवनागरी लिपि के सम्बन्ध में सम्मत्ति व्यक्त की है । कुछ समय पहले भोपाल में भी इसी प्रकार भाषण करते हुए राष्ट्रभाषा प्रचार समिति के अधिवेशन में उन्होंने देवनागरी लिपि के सम्बन्ध में अपनी सम्मति व्यक्त की थी । अभी कुछ दिन पहले भारतीय संगम का अधिवेशन होकर चुका है वहां पर चीन में हमारे जो पहले राजदूत रह चुके हैं और जो वर्तमान राज्य सभा में सदस्य हैं, डा० पणिक्कर उन्होंने कहा था कि भारत की भाषाओं को यदि निकट लाना है तो नागरी लिपि को सामान्य रूप मे हम को व्यावहारिक रूप देना होगा ।

मैं केवल कुछ विशिष्ट व्यक्तियों के सम्बन्ध में ही नहीं, दक्षिण भारत की एक बड़ी साहित्यिक सभा जिसे मलयालम साहित्य सभा कहते हैं उसका भी मत बताना चाहता हूं । उस सभा ने एक प्रस्ताव पास किया है और प्रस्ताव पास करके आग्रह किया है कि मलायाली भाषा के लिए अपनी लिपि के अतिरिक्त देवनागरी लिपि को वैकल्पिक रूप मे स्वीकार कर लिया जाए तो कहीं अधिक अच्छा हो । मेरा अभिप्राय इस प्रस्ताव को उपस्थित करते समय यह कदापि नहीं है कि जिन भाषाओं के पास अपनी अपनी लिपियां हैं, उन लिपियों को समाप्त कर दिया जाए और उनके स्थान पर देवनागरी लिपि ही को मान्यता दे दी जाए । मेरा अभिप्राय केवल इतना है कि जिन भाषाओं के पास अपनी लिपियां हैं, उन लिपियों के पीछे भी कुछ इतिहास है और उन लिपियों के द्वारा उन भाषाओं को जानने वालों की बहुत बड़ी संख्या भी है । मेरे प्रस्ताव का उद्देश्य तो केवल मात्र इतना है कि भारतीय भाषायें जो छोटे क्षेत्रों में इस समय सिमटी हुई पड़ी हैं, उनका क्षेत्र बढ़े और वे एक दूसरे के अधिक निकट आएं । इसके लिये यह अत्यन्त आवश्यक है कि सामान्य लिपि के रूप में एक लिपि को स्वीकार कर लिया जाए और वह लिपि देवनागरी हो उपयुक्त हो सकती है । दूसरे शब्दों में अगर कहा जाए तो इसे यों भी कहा जा सकता है कि अपनी अपनी लिपियों को सुरक्षित रखते हुए सामान्य रूप से सब के लिए एक अतिरिक्त वैकल्पिक लिपि देवनागरी यदि मान ली जाए तो इसमें अधिक सुविधा होगी ।

मैं इस बात को इस दृष्टि से भी कहना चाहता हूं कि अभी हमारे सम्मुख जो समस्यायें हैं, उन समस्याओं को देखते हुए यह अत्यन्त आवश्यक है कि हम अपने राष्ट्र की एकता को अक्षुण्ण रखने के लिये तथा बदलती हुई परिस्थितियों के साथ भाषा के सम्बन्ध में, सामाजिक रीति रिवाजों के सम्बन्ध में तथा और बहुत सी बातों के सम्बन्ध में भी कुछ परिवर्तन करें । हमारी सभी भारतीय भाषाओं की अपनी वर्णमालाओं का क्रम एक जैसा है । इस बात को कहते हुए मैं थोड़ा इसलिए भी अपने कथन की पुष्टि समझता हूं कि भारतवर्ष में जितनी भी प्रादेशिक वर्णमालायें हैं वे सब "अ" से आरम्भ होती हैं और "ह" पर आकर समाप्त होती हैं । दूसरे इन वर्णमालाओं में एक सबसे बड़ी विशेषता यह भी है कि अक्षरों की संख्या जहां समान है, वहां दूसरी एक यह भी है कि क्रम भी लगभग सब का बराबर

[श्री प्रकाशवीर शास्त्री]

है। स्वरों से सब भाषाओं की लिपियां आरम्भ होती हैं और व्यंजनों पर समाप्त होती हैं। उर्दू की लिपि को छोड़ कर मेरा अपना यह विश्वास है कि भारतवर्ष की जितनी भी प्रादेशिक लिपियां हैं, ध्वनियों के अन्दर ९९ प्रतिशत उनमें समता है। और आकृति के अन्दर ८० प्रतिशत समता है। कुछ थोड़ा बहुत अन्तर तामिल भाषा की लिपि के अन्दर हो तो हो क्योंकि अक्षरों का थोड़ा अभाव हो सकता है। परन्तु तामिल भाषा की एक दूसरी लिपि भी है जिस को ग्रन्थम कहा जाता है। ग्रन्थम लिपि वह है जिसमें ग्रन्थों की रचना की जाती है। वह लिपि एक पूर्ण लिपि है। इस से मेरा अनुमान है कि भारतवर्ष की कोई भाषा इस प्रकार की नहीं है जिसे यदि देव नागरी लिपि में लिखा जाय तो उसमें किसी प्रकार की न्यूनता रह जाये।

एक बात मैं और इस सम्बन्ध में सुझाव के रूप में कहना चाहूंगा। यदि किसी भाषा को देवनागरी में लिखने में किसी प्रकार की कोई कठिनाई हो तो मेरा यह आग्रह नहीं है कि देव नागरी में इस समय जितने अक्षर हैं उतने ही रक्खे जायें, आवश्यकतानुसार उसमें परीवर्तन हो सकता है। अब मराठी भाषा में जैसे हो रहा है ह्रस्व 'ए' और ह्रस्व 'ओ' की कमी को पूरा करने के लिये उन्होंने देव नागरी लिपि में चन्द्र बिन्दु लगाया है, उसी प्रकार दूसरी भाषाओं की बात भी आती है। जिन्हें देव नागरी लिपि में लिखने में किसी प्रकार की कठिनाई हो वहां भाषा के रूप में कुछ थोड़ा बहुत परिवर्तन कर दिया जाये। लेकिन भाषा शास्त्रियों का इस प्रकार कथन है कि भारतवर्ष में जितनी भाषायें प्रचलित हैं उनको यदि देवनागरी लिपि में लिखा जाये और उसमें कुछ परिवर्तन की आवश्यकता हो भी तो ऐसे परिवर्तन १० से अधिक नहीं होंगे। १० परिवर्तनों के पश्चात् भारत की सभी प्रादेशिक भाषायें देव नागरी लिपि में लिखी जा सकेंगी।

एक बात मैं विशेष रूप से कहना चाहता हूं और वह यह कि कुछ भारतीय भाषायें ऐसी हैं जिन की लिपि देव नागरी लिपि के बहुत ही निकट है। जिस प्रकार गुजराती भाषा है। गुजराती भाषा इस प्रकार की है कि अगर उस पर शिरो रेखा लगा दी जाये तो गुजराती और देव नागरी में कोई अन्तर नहीं रह जाता। केवल दो चार शब्दों का अन्तर रह जाता है। इसी प्रकार से बंगला भाषा है। जिस समय मैं बंगला भाषा कह रहा हूं तो उसमें मैं असमियां भाषा को सम्मिलित कर रहा हूं क्योंकि असमियां भाषा की जो लिपि है वह बंगला से मिलती जुलती है। इसी प्रकार उड़िया भाषा है। मराठी की लिपि तो देवनागरी ही है। नेपाल में जो गोरखाली भाषा बोली जाती है वह देव नागरी लिपि में ही लिखी जाती है। इस तरह जिन भाषाओं का व्यवहार हम आज करते हैं यदि उन की सामान्य लिपि भी हो जाए तो मेरा अनुमान है कि उनको एक बड़े परिवार में सम्मिलित करने में इससे बहुत कुछ सहायता मिलेगी। प्रधान मन्त्री श्री जवाहरलाल नेहरू ने भी इस सम्बन्ध में अपनी एक सम्मति व्यक्त की है जिस को राजभाषा आयोग ने अपने प्रतिवेदन में बड़े गौरव के साथ उद्धृत किया है। उन्होंने अपनी आत्म कथा में इन भाषाओं के सम्बन्ध में लिखा है :

"लिपि सुधार के कार्य में अगला प्रोग्राम मुझे यह प्रतीत होता है कि संस्कृत की पुत्री भाषाओं, हिन्दी, बंगला, मराठी और गुजराती के लिए एक सामान्य लिपि स्वीकार की जाये। स्थिति यह है कि इन सब की लिपियों का उद्गम और मूल स्थान एक है और इन में परस्पर अधिक अन्तर भी नहीं है, अतः एक सामान्य लिपि के रूप में एक सामान्य साधन खोज निकालना कठिन न होना

चाहिये । इससे ये चार बड़ी भगिनी भाषाएं एक दूसरे के बहुत अधिक निकट आ जायेंगी ।"

लेकिन इसके साथ साथ मैं दूसरी बात भी एक कहना चाहता हूं कि भारतवर्ष में कुछ इस प्रकार की बोलियां भी हैं जिनके पास अपनी कोई लिपि ही नहीं है, विशेष कर हमारे बनवासी भाई जो आदिवासी क्षेत्रों में रहते हैं, उनके आदिवासी क्षेत्रों में जो बोलियां बोली जाती हैं, उन के पास अपनी कोई लिपि नहीं है । उन बोलियों के सम्बन्ध में भी मेरा सुझाव है कि देवनागरी को अगर एक सामान्य लिपि के रूप में स्वीकार किया जायेगा तो उन को इसमें बहुत बड़ी सहायता मिलेगी । मैं अपने कथन की पुष्टि में सन् १९५२ में जो अनुसूचित जातियों का सम्मेलन दिल्ली के अन्दर हुआ था और जिसमें भारतवर्ष में इस क्षेत्र में काम करने वाले सभी प्रमुख कार्यकर्ता एकत्र हुए थे, विशेष रूप से हमारे राष्ट्रपति जी, प्रधान मन्त्री जी और भी दूसरे लोग एकत्र हुए थे, उसकी बात रखना चाहता हूं । राष्ट्रपति जी ने जहां और बहुत से सुझाव अनुसूचित जातियों के सम्बन्ध में दिये थे वहां उन्होंने भाषाओं की लिपि के सम्बन्ध में एक सुझाव दिया था, जो कि मेरे इस प्रस्ताव की पुष्टि करता है । राष्ट्रपति जी ने सुझाव देते हुए यह कहा था :

> "मेरा यह विचार है कि अन्य बालकों की तरह ही जन जातियों के बालकों को भी अपने को दो लिपियों से परिचित करना होगा । एक तो उस भाषा की लिपि होगी जो उनके चारों ओर बोली जाती है और दूसरी हिन्दी की लिपि होगी । संविधान के अनुसार भारत की लिपि नागरी होने वाली है । सम्भवत: यह वांछनीय होगा कि सब जन जातियों की भाषा के लिये हिन्दी लिपि को ही अपना लिया जाए क्योंकि हर हालत में जन जाति के लोगों को हिन्दी तो किसी न किसी अवस्था में अखिल भारतीय प्रयोजनों के लिये सीखनी ही होगी और उन की अपनी किसी लिपि के अभाव में यह कहीं बेहतर है कि उनकी भाषा उस लिपि को अपनाये जो सर्वाधिक व्यापक लिपि होने वाली है और जो वास्तव में आज भी देश में सर्वाधिक व्यापक लिपि है ।"

अब एक और बात जो मैं कहना चाहता हूं वह यह है कि सभी भारतीय भाषाओं के लिए एक सामान्य लिपि ढूंढी जाये । और उसके सम्बन्ध में मैं देव नागरी लिपि के सम्बन्ध में जो कुछ कह रहा हूं वह मैं कोई नई बात प्रस्तुत नहीं कर रहा हूं । हमारे देश का पुराना इतिहास भी इस बात का साक्षी है कि हमारे देश में एक सामान्य लिपि का प्रचार और प्रसार रहा है और ऐसे समय में रहा है जब हमारे यहां यातायात की सुविधायें आज की तरह विकसित नहीं थीं । सबसे पहले हमारे देश में ब्राह्मी लिपि सामान्य लिपि के रूप में व्यवहृत होती थी । लुम्बिनी (नेपाल) से मास्की (मैसूर) तक और उड़ीसा से गिरनार (सौराष्ट्र) तक भारत में अशोक के जो शिला लेख पाये गये हैं वे सब ब्राह्मीलिपि के अन्दर ही हैं लंका और वियतनाम और दूसरे देशों में भी कुछ शिला लेख मिले हैं, वे भी ब्राह्मी लिपि में हैं । मैं तो निवेदन करना चाहूंगा कि न केवल इस भारतवर्ष के क्षेत्र में ही बल्कि भारतवर्ष के आस पास एशिया के भूखण्डों के अन्दर भी तिब्बत, ब्रह्मा, श्याम, हिन्देशिया, बाली, जावा, सुमात्रा और कम्बोडिया आदि देशों की जो वर्णमाला है वह भी देव नागरी से बहुत मिलती जुलती है । यदि भारत में सामान्य रूप से एक लिपि व्यापक हो जाय तो सम्भव है कि एशिया खण्ड के इन देशों में भी भारतीय भाषाओं का साहित्य सुगमता से पहुंच सके और भारतीय संस्कृति जो उन देशों को विरासत में मिली है वह उसकी अच्छी तरह रक्षा कर सके'

[श्री प्रकाशवीर शास्त्री]

अभी पीछे भारत सरकार ने संस्कृत कमिशन की नियुक्ति की थी। संस्कृत कमिशन ने जहां अपनी रिपोर्ट में और बहुत सी बातें दी हैं, वहां उस ने यह बह भी लिखा है कि संस्कृत जहां जहां प्रचलित है वहां सर्वत्र ही देव नागरी लिपि में वह मिलेगी। इस तरह से देव नागरी संस्कृत की एक सार्वदेशिक लिपि हो गई है। १९ वीं शताब्दी के अन्त में जब मुद्रण कार्य चालू हुआ और उत्तरोत्तर आगे बढ़ रहा था उस समय संस्कृत देव नागरी लिपि में ही मद्रित की जाती थी पीछे भी जैसा मैं कह चुका हूं गुजराती भाषा तो हिन्दी के बहुत ही निकट है। जो गुजराती की कवितायें होती थीं १९वीं शताब्दी में वह देव नागरी में ही छपती थीं। पहले गुजरात में बड़ौदा एक बड़ी रियासत थी। उस बड़ौदा रियासत में भी एक समय देव नागरी चलती थी, जिसे वहां पर बाल बोध लिपि कहा जाता था।

इस के बाद, आप आश्चर्य करेंगे कि पोरबन्दर में जहां पर गांधी जी का कीर्ति स्तम्भ बना हुआ है, वहां गांधी जी के परिवार के जो पुराने दस्तावेज हैं उन की भाषा तो गुजराती है, लेकिन गांधी जी के दादा और परदादा आदि के उन में जो हस्ताक्षर हैं वे नागरी लिपि में ही हैं। इस से प्रतीत होता है कि नागरी लिपि का भी रूप व्यापक रूप रहा है। जब मैं आप से इस बात को यहां कह रहा हूं तो मैं ने अब तक इस देश की बात कही है। अब मैं आप के सामने दूसरे देशों के कुछ उदाहरण प्रस्तुत करना चाहता हूं।

समृद्ध और प्रगतिशील देशों ने अपने को अखंडित और एक इकाई के रूप में बनाये रखने के लिये लिपि के सम्बन्ध में क्या नीति अपनाई? प्रारम्भ में इस प्रकार की स्थिति सोवियट रूस के सामने आई वहां पर इस समय १६ भाषायें प्रचलित हैं। आरम्भ में उन्होंने रोमन में अपना कार्य करने का थोड़ा यत्न किया, लेकिन उन्होंने देखा कि उन की जो अपनी भाषा है, वह उच्चारण की दृष्टि से रोमन से बहुत दूर जा पड़ती थी। तो फिर उन्होंने थोड़ा सा परिश्रम कर के रोमन, ग्रीक और हिब्रू इन तीनों भाषाओं की लिपियों को मिला कर के एक पृथक लिपि "किरोलिक" के रूप को स्वीकार किया। रूस में हालांकि इस समय १६ भाषाय प्रचलित हैं लेकिन उन सब का काम उसी एक लिपि में चल रहा है और वह सामान्यरूप से वहां व्यवहृत होती है।

चीन में इस समय ४३ से अधिक भाषायें हैं। उन की जो लिपि है वह अपनी दृष्टि से भिन्न प्रकार की है चित्रमय लिपि है। लेकिन लिपि सारे देश के अन्दर एक ही है। योरप के सम्बन्ध में जैसा मैं ने पहले कहा, वहां की जितनी भाषायें हैं उन्होंने एक सामान्य लिपि के रूप में रोमन को ही स्वीकार किया हुआ है।

हमारे प्रधान मंत्री जी ने कई बार भाषा विवादों के सम्बन्ध में स्थान स्थान पर भाषण दिये हैं। उन्होंने एक बार बड़े बलपूर्वक कहा कि एक बात तो हमें स्वीकार करनी चाहिये कि स्विटजरलैंड में छोटे छोटे बच्चे तीन तीन भाषायें सीखते हैं तो भारतवर्ष के अन्दर लोग दूसरी भाषायें क्यों नहीं सीख सकते हैं? लेकिन प्रधान मंत्री जी शायद इस बात को भूल गये कि स्विटजरलैंड में भाषायें तीन अवश्य है, लेकिन उन की लिपि एक ही है। यदि भारत वर्ष में यह आग्रह किया जाये कि लोग अधिक से अधिक भाषायें सीखें और उन सब की लिपि देव नागरी कर दी जाये तो मेरा यह अनुमान है कि प्रादेशिक भाषाओं को आगे विकसित होने के लिये इस से बहुत बड़ी सहायता मिलेगी।

यहां एक प्रश्न छोटा सा उठता है कि आखिर यह हो क्यों आवश्यक है कि देव नागरी को सामान्य रूप में स्वीकार किया जाये। रोम

को सामान्य लिपि के रूप में क्यों न रक्खा जाये । वह आज योरप और दूसरे देशों में चलती है । लेकिन इस सम्बन्ध में मैं पहली बात तो यह कहना चाहूगा कि रोमन लिपि योरप के देशों के लिये ही पर्याप्त उपयोगी सिद्ध नहीं हो रही है क्योंकि रोमन रोम देश की भाषा की जरूरतों को पूरा करने के लिये बनाई गई थी । बाद में वह दूसरे देशों में भी चली । लेकिन जहां की बोलियों में कुछ अन्तर था उन्हें रोमन लिपि को अपनाने में पर्याप्त कठिनाई का सामना करना पड़ा । क्योंकि इसमें आकार विन्यास का क्रम तो वही रहा जो कि रोमन भाषा के लिए आवश्यक था लेकिन बोलियों का क्रम दूसरा दूसरा होता गया ।

जिन भाषाओं के पास अपनी समृद्ध लिपियां और विशाल साहित्य का भंडार है जो कि प्रर्याप्त परिष्कृत हैं, उन भाषाओं को दूसरों से लिपि उधार लेने की आवश्यकता क्यों होनी चाहिए । जिसको पाणिनि जैसे ऋषि ने परिष्कृत करके जिस लिपि को संस्कृत रूप दिया तो फिर हमको दूसरों से लेने की बात क्यों सोचनी चाहिए ।

चीन के सामने भी यह प्रश्न आया कि वह अपनी अनेकों भाषाओं के लिए चित्र लिपि को हटाकर उसके स्थान पर कोई दूसरी लिपि रखे तो उसके सामने रोमन लिपि का सुझाव आया लेकिन चीन अभी तक इस सम्बन्ध में निर्णय करने में हिचकिचा रहा है और उसने अभी तक रोमन लिपि को सोलहो आना स्वीकार नहीं किया है । अब तो हमारे देश और चीन के बीच में कटुता उत्पन्न हो गयी है इससे पहले तो उनको हमारे यहां से भी सुझाव दिया जा सकता था कि वे अपनी भाषा के लिए हमारी लिपि को स्वीकार करने पर विचार करें । अभी भी हमारे प्रतिरक्षा मंत्री जब संयुक्त राष्ट्र संघ में चीन को लेने के प्रस्ताव का समर्थन करते हैं, तो क्यों न श्री कृष्ण मेनन साहब यह सुझाव भी चीन को दें कि वह हमारी वैज्ञानिक लिपि को अपनी भाषा के लिए स्वीकार करें। जब वे हमारे देश से गए हुए धर्म को स्वीकार कर सकते हैं तो क्यों नहीं हमारी लिपि को भी स्वीकार करेंगे जो कि इतनी वैज्ञानिक और परिष्कृत लिपि है ।

हमारे लिए रोमन लिपि को स्वीकार करने में जो सबसे बड़ी कठिनाई है वह यह है कि उसमें एक ही अक्षर कई कई ध्वनियों के लिए प्रयुक्त होता है । उदाहरण के लिए "सी" कहीं "क" के लिए लिखा जाता है, तो कहीं "स" के लिए काम में लाया जाता है और कहीं "च" के लिए लिखा जाता है ।

दीर्घ ई के सम्बन्ध में तो रोमन लिपि में बड़ी कठिनाई है । कहीं दीर्घ ई के लिए डबल ई लिखनी पड़ती है, कहीं ई और ए और कहीं दीर्घ ई के लिए रोमन लिपि में आई और ई लिखना पड़ता है । तो इस प्रकार दीर्घ ई के सम्बन्ध में रोमन लिपि में बड़ी कठिनाई है ।

ह्रस्व इ और अनुस्वार आदि के लिए भी रोमन लिपि में कुछ विशेष चिह्न देने पड़ेंगे परन्तु उसके बाद भी उसका सुगमता से उच्चारण शुद्ध हो सकगा इसमें सन्देह है ।

लेकिन जब हमारे पास अपनी एक पूर्ण लिपि है तो हम अपने मस्तिष्क में दूसरी लिपि को स्वीकार करने की बात ही क्यों लाएं ।

रोमन लिपि के प्रयोग से किस प्रकार की कठिनाइयां उत्पन्न हो सकती हैं इसका एक छोटा सा उदाहरण मैं आपके सामने प्रस्तुत करना चाहता हूं । अभी पीछे साहित्य अकादमी ने पुरस्कारों की घोषणा करते हुए श्री सुमित्रानन्दन पन्त की पुस्तक "कला और बूढ़ा चांद" के लिए एक पुरस्कार घोषित किया था लेकिन आकाशवाणी केन्द्र से इस समाचार का प्रसारण किया गया तो क्योंकि वह समाचार रोमन लिपि में लिखा था इसलिए वहां से प्रसारित किया गया "काला और भूरा चांद" । तो यह कठिनाई रोमन लिपि में वह समाचार लिखा होने के कारण आयी । देवनागरी लिपि की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि जो बोलिए

[श्री प्रकाशवीर शास्त्री]

वही लिखिए और जो लिखिए वही पढ़िए। लेकिन रोमन लिपि में यह बात नहीं है। उदाहरण के लिए अगर हमको थ लिखना है तो उसके लिए टी-एच लिखकर थ पढ़ना होगा। फारसी लिपि में तो यह दुर्बलता और भी अधिक है। वहां थ लिखने के लिए ने और दुचश्मी हे लिखनी होगी और फिर उसको थ पढ़ा जाएगा। तो आप देखें कि बोलना तो है थ और लिखा जाता है ते और दुचश्मी है। तो इन सब बातों को देखते हुए मेरा अपना अनुमान है कि रोमन तथा अन्य भी लिपियां हमारे लिए उपयुक्त नहीं हो सकेंगी।

मैं अपनी बात को पुष्ट करने के लिए महात्मा गांधी जी के कुछ उद्धरण देना चाहता हूं। महात्मा गांधी जी ने ११ फरवरी, १९३९ में **हरिजन** में रोमन लिपि के बारे में इस प्रकार लिखा था :

> "किन्तु भावना और विज्ञान दोनों ही रोमन लिपि के विरुद्ध हैं। इसका एक मात्र गुण यह है कि मुद्रण और टाइपिंग के प्रयोजन के लिए यह लिपि सुविधाजनक है। किन्तु इस लिपि को सीखने में लाखों लोगों को जो कठिनाई अनुभव होगी उसकी तुलना में उपरोक्त गुण का कुछ भी महत्व नहीं है। जो लाखों लोग अपनी प्रान्तीय लिपियों अथवा देवनागरी में अपने साहित्य को पढ़ना चाहते हैं उन्हें रोमन लिपि से कोई सहायता नहीं मिल सकती। लाखों हिन्दुओं और मुसलमानों के लिए भी देवनागरी लिपि को सीखना अधिक सुगम है क्योंकि अधिकतर प्रान्तीय लिपियां देवनागरी से निकली हैं। परन्तु लाखों हिन्दुओं या मुसलमानों को सिवाय उस समय के जब वे अंग्रेजी सीखना चाहें रोमन लिपि की कभी आवश्यकता नहीं होगी। इसी प्रकार जो हिन्दू अपने धर्म ग्रन्थों का मूल रूप में अध्ययन करना चाहते हैं उन्हें देवनागरी लिपि सीखनी पड़ती है और वे सीखते भी हैं। अतः देवनागरी लिपि को देश भर की भाषाओं के लिए प्रयोग करने के आन्दोलन का यह एक ठोस आधार है। रोमन लिपि का प्रयोग ऊपर से लादना होगा जो कभी लोकप्रिय नहीं हो सकती। जनता में सच्ची जागृति पैदा होने पर जो कि अप्रत्याशित शीघ्रता से चली आ रही है, ऊपर से लादी गई सब चीजों का अस्तित्व ही नहीं रहेगा।"

तिलक महाराज ने तो और भी अधिक जोर के साथ और कटु शब्दों में सन् १९०५ में बनारस नागरी प्रचारिणी में अपने भाषण में इसी भावना को व्यक्त किया था। उन्होंन कहा था :

> "इस' कठिनाई (अर्थात् भारतीय भाषाओं की बहुत सी अलग अलग लिपियों) से बचने के लिए एक बार यह सुझाव दिया गया था कि हम सब रोमन अक्षरों को अपना लें और इसके समर्थन में एक कारण यह बताया गया था कि इस से एशिया और यूरोप की एक ही वर्णमाला हो जाएगी।
>
> "मुझ तो यह सुझाव सर्वथा हास्यास्पद प्रतीत होता है। रोमन वर्णमाला और रोमन अक्षरों में बहुत सी त्रुटियां हैं और ये हमारी ध्वनि को व्यक्त करने के लिए सर्वथा अनुपयुक्त हैं। अंग्रेजी व्याकरणों ने भी इसे दोषपूर्ण पाया है। कभी कभी तो एक ही अक्षर तीन या चार ध्वनियों को व्यक्त करता है और कभी एक ही ध्वनि दो या तीन अक्षरों द्वारा व्यक्त की जाती है। इसके साथ साथ हमारी भाषाओं में प्रयुक्त होने वाली ध्वनियों को ठीक ठीक व्यक्त करने के लिए बिना विभेदकारी चिह्न लगाए रोमन अक्षर ढूंढने में जो कठिनाई होगी इसे देखने से सब

को यह स्पष्ट हो जाएगा कि यह सुझाव कितना हास्यस्पद है ।

अतः आप देखेंगे कि हम सब को तो एक ऐसी सामान्य लिपि चाहिए जो रोमन से अधिक पूर्ण हो । यूरोप के संस्कृतज्ञों ने यह घोषणा की है कि देवनागरी वर्णमाला यूरोप की सभी वर्ण मालाओं से अधिक पूर्ण है । और इस राय के हमारे सम्मुख होते हुए भारत की सभी आर्य भाषाओं के लिए किसी अन्य सामान्य लिपि की खोज करना आत्म-घातक होगा । मैं इससे भी आगे जाऊंगा और मेरा यह कहना है कि भारत में वर्णों और ध्वनियों का वर्गीकरण करने में जितनी मेहनत की गई है और जिसका पूर्ण रूप हमें पाणिनी के ग्रन्थों में मिलता है, उतनी विश्व की किसी अन्य भाषा में नहीं मिलता है ।"

देवनागरी लिपि में इस प्रकार की कोई त्रुटियां नहीं हैं जोकि रोमन लिपि में हैं । और सब से बड़ी बात तो देवनागरी लिपि के पक्ष में यह है कि इस का देश में बहुत प्रचलन है ।

इस सम्बन्ध में मैं यह भी निवेदन कर दूं कि भारतीय सेनाओं में भी कुछ समय के लिये रोमन लिपि का प्रयोग आरम्भ किया गया था लेकिन उस की अनुपयुक्तता को देखते हुए सन् १९५२ में उस के प्रयोग पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया ।

अंग्रेजी के एक बहुत बड़े विद्वान मोनियर विलियम ने देवनागरी को विश्व में सर्वाधिक सुडौल, यथा प्रमाण, सुन्दर और पूर्ण वर्ण-माला कहा है ।

देवनागरी लिपि प्रादेशिक भाषाओं के साहित्य के लिये उपयुक्त आधार बन सकती है । जहां जहां देवनागरी लिपि में प्रादेशिक भाषाओं के साहित्य प्रकाशित हो रहे हैं वहां उन से उन प्रादेशिक भाषाओं के विस्तार में पर्याप्त सहायता मिली है । इस सम्बन्ध में सब से पहला स्तुत्य प्रयास स्वतंत्र भारत में लोक-सभा के माननीय अध्यक्ष श्री गणेश वासुदेव मावलंकर ने संविधान की सब ही भारतीय भाषाओं का अनुवाद देवनागरी लिपि में प्रकाशित करा कर आरम्भ किया था । भारतीय संविधान का अनुवाद भिन्न भिन्न प्रादेशिक भाषाओं में हुआ परन्तु उन सब का प्रकाशन देवनागरी लिपि में भी कराया गया ।

इसी प्रकार हाल में साहित्य अकादमी द्वारा रवीन्द्र साहित्य के दो बड़े ग्रंथ "एकोत्तर शती" और "गीत-पंचशती" भी बंगला भाषा और देव नागरी लिपि में प्रकाशित किये गये हैं जोकि बहुत लोकप्रिय हुए हैं ।

विनोबा भावे का गीता प्रवचन जो तेलुगु भाषा में है वह भी देवनागरी लिपि में प्रकाशित हुआ है और वह आन्ध्र में बहुत लोकप्रिय हुआ है ।

संसदीय हिन्दी परिषद् की ओर से भी पहले "देवनागर" नाम से एक मासिक पत्र प्रकाशित होता रहा है जिस के द्वारा भारत के विभिन्न प्रादेशिक भाषाओं और लेखकों को एक दूसरे के निकट लाने का प्रयास किया गया ।

दक्षिण भारत की हिन्दी प्रचारक संस्थाओं द्वारा नागरी लिपि में उन के प्रकाशन उन की अपनी भाषाओं में होते हैं ।

इस प्रकार विभिन्न प्रादेशिक भाषाओं का साहित्य यदि देवनागरी लिपि में प्रकाशित किया जायेगा तो उस का प्रचार सारे देश में आसानी से हो सकेगा । लेकिन मैं तो इस से भी आगे जाऊंगा और सुझाव दूंगा कि यदि प्रादेशिक भाषाओं के समाचार पत्र अपने समाचार पत्रों में कुछ कालम देवनागरी लिपि में निकालें तो इस दिशा में काफी प्रगति हो सकती है । पंजाब में इस प्रकार का प्रयास किया गया है और वह अपने पत्रों में कुछ कालम पंजाबी भाषा के देवनागरी लिपि में प्रकाशित करते हैं । यह

[श्री प्रकाशवीर शास्त्री]

चीज बहुत लोकप्रिय हुई है । मैं चाहता हूं कि अन्य प्रदेशों में भी इस प्रकार का प्रयास किया जाय ।

अपने वक्तव्य के अंत में सुझाव के रूप में मैं कुछ बातें कहना चाहता हूं । देवनागरी लिपि को सामान्य लिपि के रूप में स्वीकार कर लिये जाने से एक लाभ तो यह होगा कि हर भाषा के जानकार हर क्षेत्र में मिल सकेंगे । उदाहरण के लिये यदि कन्नड़ भाषा का साहित्य देवनागरी लिपि में प्रकाशित कराया जाय तो कन्नड़ भाषा के विद्वान् जिस प्रकार कन्नड़ प्रदेश में मिलते हैं उसी प्रकार दूसरे प्रदेशों में भी मिल सकेंगे, और इस प्रकार प्रादेशिक साहित्य सारे देश में लोकप्रिय हो सकेगा ।

दूसरी चीज यह है कि एशिया भूखंड में जहां जहां हमारी संस्कृति फैली हुई है वहां की वर्णमाला में हमारी वर्णमाला से समानता होने के कारण हमारी सांस्कृतिक एकता को बहुत बल मिलेगा ।

तीसरा एक सब से बड़ा लाभ यह होग कि जो विदेशी लोग भारत आ कर हमारी भिन्न भिन्न भाषाओं से परिचित होना चाहते हैं उन के मार्ग में विभिन्न लिपियों की दीवार आ जाती है जिस को देख कर वे हट जाते हैं । यदि यह लिपियों की दीवार उन के मार्ग में न हो तो उन को हमारी भाषाओं का ज्ञान प्राप्त करने में बड़ी आसानी हो और उन को ऐसा करने का प्रोत्साहन मिलेगा ।

इस सम्बन्ध में मैं एक बात यह भी कहना चाहता हूं कि इस समय पंजाब में जो एक विवाद चल रहा है, यदि देवनागरी को एक सामान्य लिपि स्वीकार कर लिया जाये तो मेरा अपना अनुमान है कि इस विवाद के हल में भी इस से बहुत हद तक सहायता मिलेगी ।

सब से बड़ा लाभ देवनागरी लिपि को सामान्य लिपि स्वीकार कर लेने से उर्दू को होगा । उरदू यदि देवनागरी लिपि में लिखी जायेगी तो सम्भव है यह यहां पर बहुत देर तक टिक सके ।

लेकिन सब से बड़ी चीज जिस को राजभाषा कमीशन ने भी अपने प्रतिवेदन में स्वीकार किया है, वह यह है कि यदि प्रादेशिक भाषाओं के लिये भी देवनागरी लिपि को स्वीकार कर लिया जाये तो समाचार एजेंसियों को इस से बहुत बड़ी सुविधा होगी ।

17 hrs.

राज भाषा आयोग ने भी अपनी रिपोर्ट में लिखा है कि देश में जो ३३० दैनिक पत्र निकलते हैं उन में अंग्रेजी के केवल ४० पत्र हैं लेकिन जो समाचार दिये जाते हैं दैनिक पत्रों को वे सब अंग्रेजी में ही भेजे जाते हैं उन का उन को अनुवाद करना पड़ता है । राजभाषा कमिशन की सम्मति यह है कि अगर देवनागरी में इन्हें अपनी भाषाओं में समाचार मिलने लगें तो अनुवाद के व्यय से बच जायेंगे और समय की भी बचत हो जायेगी ।

एक बहुत ही महत्वपूर्ण बात जोकि इस के सम्बन्ध में मैं कहाना चाहता हू वह यह है कि अभी भावनगर कांग्रेस में श्री मुरारजी देसाई ने राष्ट्रीय एकता के लिये एक प्रस्ताव उपस्थित किया था और अगर वह भी इस प्रश्न पर अपने हृदय पर हाथ रख कर सोचेंगे तो वह भी इस में अपनी सहमति व्यक्त करेंगे कि राष्ट्रीय एकता को इस भाषावार प्रान्त रचना ने बड़ा आघात पहुंचाया है । इस भाषावार प्रान्त रचना ने देश की अखंडता और एकता को खंडित किया है । इस के कारण जो विघटन और पृथक्त्व की मनोवृत्ति देश में बढ़ रही है मेरे प्रस्ताव को स्वीकार करने से वह समन्वय और राष्ट्रीय एकता में बदल जायेगी । आज हमारे राष्ट्रीय नेता इस बात के लिये चिंतित हैं कि किस

प्रकार से देश में एकता स्थापित की जाये, मेरा उन से विनम्र निवेदन है कि जो हम से यह भाषावार प्रान्त रचना की भूल हो चुकी है उस के निराकरण का उपाय यही है कि भिन्न भिन्न प्रादेशिक भाषाओं के लिये सामान्य रूप से देवनागरी लिपि को सब भाषाओं का एक अतिरिक्त लिपि मान लिया जाये ।

हमारे राष्ट्रीय नेता नेहरू जी और राष्ट्रपति जी आदि और जो उधर सामने की ट्रेजरी बेंचेज पर बैठे हैं जब वे सदन से बाहर जाते हैं तो देवनागरी लिपि के पक्ष में भाषण करते हैं, मेरा आज का यह प्रस्ताव उन के लिये एक कसौटी है । इस से यह सिद्ध हो जायेगा कि वे ऐसा केवल कहते ही हैं अथवा उसे व्यावहारिक रूप देने की भी उन की इच्छा है ।

इन शब्दों के साथ मैं अपने भाषण को समाप्त करता हूं और आग्रह करता हूं कि देवनागरी को सब प्रादेशिक भाषाओं के लिये एक सामान्य लिपि के रूप में स्वीकार कर लिया जाये ।

Mr. **Deputy-Speaker**: Resolution moved:

> "This House is of opinion that Devnagari be adopted as a common scwript for all regional languages in order to bring them closer to each other."

There are some amendments also.

Shri N. R. Muniswamy (Vellore): I am moving all my amendments.

Mr. Deputy-Speaker: Only amendments Nos. 4 and 6 would be in order.

श्री भ० दी० मिश्र (केसरगंज) : उपाध्यक्ष महोदय, मैं निवेदन करना चाहूंगा कि यह विषय इतना महत्वपूर्ण है और इस के लिये समय बढ़ा दिया जाये ।

श्री प्रकाशवीर शास्त्री : चूंकि इस प्रस्ताव पर बहुत सारे माननीय सदस्य बोलना चाहते हैं इसलिये इस का थोड़ा समय बढ़ा दिया जाये ।

Mr. Deputy-Speaker: I would rather invite the opinion of Shri N. R. Muniswamy about the issue that has been raised that the time be extended.

Shri N. R. Muniswamy: My only anxiety is that I should move my resolution.

Mr. Deputy-Speaker: That is the difficulty. I will allow him to move amendments Nos. 4 and 6 only and not the others. Shri Shree Narayan Das is not here. So, his amendment is not moved.

Shri N. R. Muniswamy: I beg to move:

> "For the original Resolution, *substitute*—
>
> "This House is of opinion that Devnagari script be adopted for all regional languages in order to bring them closer to each other provided that approval is given by all the State Legislatures without exception."
>
> "For the original Resolution, *substitute*—
>
> "This House is of opinion that Devnagari script be adopted as a common script for all the regional languages except Tamil, provided that State Legislatures agree to this by their respective Legislations."

Mr. Deputy-Speaker: Both these amendments and the original resolution are before the House. May I know how many hon. Members want to speak?

Some Hon. Members *rose*—

Mr. Deputy-Speaker: There is a large number. I will allow 10 minutes each.

श्री प्रकाशवीर शास्त्री : यह साढ़े ४ बजे आरम्भ हुआ है और चूंकि विषय काफी महत्वपूर्ण है और काफी सदस्य इस पर बोलना चाहते हैं इसलिये इस पर समय बढ़ा दिया जाये ।

उपाध्यक्ष महोदय : अब कितना भी समय बढ़ाया जाये तो भी टाइम लिमिट तो करनी पड़ेगी। मैं मेम्बर साहबान से दरख्वास्त करूंगा कि वे दस मिनट में अपनी बात समाप्त कर दें।

श्री भ० दी० मिश्र : दस मिनट पर्याप्त होंगे।

उपाध्यक्ष महोदय : मैं समझता हूं कि बजाय इस के कि वह सदस्य जोकि इस प्रस्ताव के हक में हैं वे बोलें हमें यह करना चाहिये कि जो दूसरी बोलियों वाले हैं उन को ज्यादा वक्त दिया जाये ताकि हर एक आदमी अपनी अपनी बोली के मुताल्लिक कह सके।

आचार्य कृपलानी (सीतामढ़ी) : हम किस बोली के हैं ?

उपाध्यक्ष महोदय : आप किसी में नहीं हैं तो आप बोले ही नहीं। दस मिनट हर एक मेम्बर के लिये होंगे।

Shri Mukerjee. He may finish in ten minutes. Every hon. Member will have ten minutes.

Shri H. N. Mukerjee (Calcutta-Central): Mr. Deputy-Speaker, Sir, my friend, Shri Prakash Vir Shastri has, in his usual persuasive and powerful way, moved his Resolution, and if this Resolution serves the purposes of national integration, to which earlier today the Finance Minister made reference, it surely deserves support. I fear, however, that in spite of a certain sympathy for this Resolution, I do not think it would be advisable for the House at this present objective moment to give out as its opinion that Devnagri should be adopted as a common script for all the regional languages. I am myself attracted to the idea of a single script and I confess that I have a soft corner for Roman script, though I have no time to go into any details in regard to the advisability of Roman script being adopted. I know also that under the Constitution it is Devnagri script which is set out to be the form in which the official language is going to be expressed. Sir, I feel, however, that it is necessary, if we can, as soon as possible, to get a common script in which we can convey our ideas and only till very recently in the army the *Fauji Akhbar* came out in the Roman script and, I am sure, it did a good deal of very valuable work.

I know very well that the Nagari script is, phonetically speaking, very nearly perfect and it is most scientifically constructed and perhaps, except for the sound "Z", there is no other sound which can come out of the human tongue which cannot be most scientifically formulated.

Shri Sampath (Namakkal): Even the Tamil "Pra" they cannot express.

17.07 hrs.

[SHRI HEDA *in the Chair*]

Shri H. N. Mukerjee: But the trouble is that we have in this country different linguistic units. At the present moment, I am talking only of the present day. We have in this country different linguistic units which do not appear at all ready to accept Devnagri as the common script for all their languages. I know my friend, Shri Prakash Vir Shastri, has stated that one does not have to give up his own script in order to accept Devnagri but, after all, if Devnagri is officially recommended and imposed, so to speak, as a common script for the whole country, then, naturally, the result would be the virtual elimination of the other scripts. Now, whether we would like it or not, there is a great deal of feeling about these scripts. There is a feeling for the Gurumukhi script, for instance, which has created so much trouble for the Punjab, even though the difference between he Devnagri script and the Gurumukhi script is infinitesimal; even so, the attachment to the script is there. There is the Tamil script and in the

national museums you will find inscriptions in which the Tamil script is used, inscriptions which are 2,000 years old. There is a great deal of sentiment and emotion attached to this kind of script and there is, in large parts of our country, a feeling that the Hindi-speaking population, as far as their leading spokesmen are concerned, are perhaps trying to go a little too fast, and I have heard from my friends in Tamil Nad that the indications in the mile-posts are sometimes given in the Hindi script.

That is a kind of thing which naturally they object to. We have noticed also how, in the case of numerals, the use of international or Roman numerals which is enjoined by the Constitution is objected to by many who look upon the Nagari numerals to be also the proper kind of script to be employed. So, that being so, the atmosphere in the country today is such that the purposes of national integration are not likely to be served by the adoption of the Devnagari script as a common script for all the different languages.

At the same time I know that it is very important for us to try to make an effort. Gandhiji wanted Hindustani in the Nagari and the Persian script. That was his prescription. It was only after we got the Constitution that the Persian script is pushed out of the picture altogether. Personally I feel that the Persian script is a little too pictorial with too many dots and too many curves. It can hardly be printed. It cannot cater to the needs of the modern age. Therefore, the criterion should be as to how the necessities of modern life can be properly satisfied.

Nagari is perfect as far as phonetics is concerned, but as far as its appearance is concerned, its writing is concerned, its typing is concerned, its printing is concerned, there are certain cumbrousnesses which still appertain to it, which cumbrousnesses are perhaps not to be noticed in the case of the Roman script, if you can make certain changes and adopt them to the needs of our country. But I am not asking that the Roman script be adopted. I only say that the Nagari script has also many special difficulties which we have to think of. Therefore let us take a long range view of the situation. As far as the short run is concerned, let us not try to make up our minds to have the Nagari script for all the regional languages. Let us postpone that decision for the future. But let us try to reform the Nagari script. There is a movement already to bring about certain changes in the Nagari script. Let us try to find out the essence of the question, the details, the application. Let us try to investigate as to whether the Nagari script or the Roman script or both could in some foreseeable future be adopted as a common script for all our regional languages. But for the time being let us not produce an impression in the country which would mean that the different regional scripts are going to be thrown overboard. If they are not going to be eliminated at least they are going to be toppled over, so to speak, by the predominance of the Nagari script. That is why I say, with all my admiration for the phonetic perfection of the Nagari script and with all my personal inclination to the adoption of one common script for all our languages, it does not seem advisable for the time being to express an opinion on behalf of the House that Nagari should be the form in which the different regional languages of our country should be expressed. That is how I look upon the matter. I have been trying to think aloud. That is why I wish to say that the resolution and the amendments as they have been put forward do not commend themselves in my opinion.

आचार्य कृपालानी : जिस भाई ने यह रेजोल्यूशन रखा है, वह बड़ा बहादुर मालूम होता है।

Some Hon. Members: English, English.

Acharya Kripalani: All right, have it in English. If you cannot understand my Hindi, I think you will never understand Hindi at all.... (*Interruption*).

I was saying that the hon. Mover of the Resolution is a very bold man. He thinks that such a proposition can find passage in this House. He is living in, what I should say a paradise of his own. The Indian people are today divided by so many things. They are not going to accept this proposition. As my hon. friend said, there is very little difference between Gurmukhi and Hindi, but, I do not know, they might shed blood to see that Gurmukhi prevails and Hindi does not prevail. There is very little difference, say, between Assamese and Bengali. But they will fight in order to keep the one or the other. When Tamilians say that their language is earlier than even the Sanskrit language and when they want a separate Tamilnad of their own, do you think that they are going to accept such a proposition? How do you think that in today's humanity, not to talk of India, anything that is reasonable can be accepted? Aristotle said, "Man is a rational animal". But he is the most irrational animal. So, however good it may be—and even though the Roman script could be a world-wide script—if we cannot be united on one script in India, how do you expect, however good the Roman script may be, that it will be accepted?

So I think that this proposition is such that it should be thrown out absolutely as an absurd proposition, though it is the most wise proposition. It will afford great facility to us to learn other languages, though it will benefit every State. But how do you expect this humanity to do anything that is right? And in India specially? People who cannot leave English today and take to Hindi, how do you expect them to take to one script? My hon. friend is a very optimistic young man. I think he will have to live for about twenty years more to understand his own country. Therefore, though it is a very good proposition, it should not be accepted because it is too good.

डा० गोविन्द दास (जबलपुर) : सभापति जी, मैं सब से पहले श्री प्रकाश वीर शास्त्री जी को उन के बड़े सुन्दर और तर्कपूर्ण भाषण पर बधाई देता हूं । उन के भाषण के बाद दो भाषण और हुए—एक श्री मुकर्जी का और एक श्रद्धेय कृपालानी जी का । कृपालानी जी के भाषण से तो बहुत स्पष्ट हो गया कि चाहे उन्हों ने यह कहा हो कि इस प्रस्ताव को फेंक देना चाहिये, पर यथार्थ में वह इस प्रस्ताव के समर्थक हैं ।

Shri Narasimhan (Krishnagiri): You are interpreting him?

डा० गोविन्द दास : उन्हों ने स्पष्ट रूप से कहा है . .

Acharya Kripalani: I am not contradicting him.

डा० गोविन्द दास : . . . कि इस देश की एकता के लिये और हमारे इस प्राचीन देश में जितनी भाषायें हैं, उन सब को समझने के लिये इस से अच्छा और कोई प्रस्ताव नहीं हो सकता था ।

Acharya Kripalani: Really, he is becoming serious!

डा० गोविन्द दास : जहां तक श्री मुकर्जी का सम्बन्ध है, चूंकि वह बंगाल से आते हैं, इसलिये इस समय मुझे उन के भाषण पर आश्चर्य नहीं हुआ । मुझे याद है कि एक समय था, जब, नागरी लिपि हमारे देश की लिपि हो, सब से पहले इस की आवाज बंगाल से उठी थी । जब स्वामी दयानन्द सरस्वती कलकत्ता गये, उस समय वह अपने सब से प्रधान ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश को संस्कृत में लिखने का विचार कर रहे थे, पर—मैं श्री

मुकर्जी को स्मरण कराना चाहता हूं---श्री केशव चन्द्र सेन के कहने से ....

Shri D. C. Sharma (Gurdaspur): What has he to do with Keshab Chandra Sen?

डा० गोविन्द दास : ....उन्हों ने अपना सत्यार्थ प्रकाश हिन्दी और देवनागरी लिपि में लिखा । यही स्थिति राजा राम मोहन राय, श्री बंकिम चन्द्र चटर्जी, नेताजी सुभाषचन्द्र बोस की थी । किस किस का मैं नाम लूं ! बंगाल का इतना बड़ा समर्थन हिन्दी और देवनागरी लिपि का था और आज उस बंगाल में इस प्रकार का विरोध देख कर मुझे दुःख होता है ।

आचार्य कृपालानी: जो इतने बड़े आदमी नहीं कर सके, वह माननीय सदस्य करना चाहते हैं ।

डा० गोविन्द दास : जब बंगाली लिपि और देवनागरी लिपि में कोई विशेष अन्तर नहीं है---हमारे देश की जितनी पूर्वी भाषायें हैं---उड़िया, असमिया, बंगाली---उन की लिपियों और देवनागरी लिपि में कोई बहुत अन्दर नहीं है---तब इस प्रकार का विरोध बंगाल से आये, इस से ज्यादा दुख की बात नहीं हो सकती ।

श्री नरसिंहन् (कृष्णगिरि) : दुःख क्यों होता है ?

डा० गोविन्द दास : यह भी मैं आप को बताता हूं । चूंकि मैं हिन्दी का बड़ा भारी समर्थक रहा हूं मेरी सुनीति बाबू से बात हुई थी । आप ने बहुत अच्छा किया जो यह प्रश्न किया । उन्होंने मुझ से कहा कि यह प्रश्न लोअर एंड फ्रिशिअ का है, यह प्रश्न नौकरियों का है, इसलिये बंगाल आज इस का इतना बड़ा विरोधी है, हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपि का । मैंने उनसे स्पष्ट कहा कि अगर आप का यह खयाल है कि हिन्दी भाषा भाषी लोअर एंड फ्रिशिअ के लिये, नौकरियों के लिये, हिन्दी का समर्थन करते हैं तो यह आप की बड़ी भारी भूल है । मैं ने आज तक कभी भी इस दृष्टि से हिन्दी का समर्थन नहीं किया है । हमारा तो विश्वास है कि यदि हम को देश को एक सूत्र में बांधे रखना है तो यहां एक भाषा की आवश्यकता है और एक भाषा के साथ एक लिपि की भी आवश्यकता है । जहां तक नौकरियों का मामला है, मैं आप से कहना चाहता हूं कि हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने, हिन्दी भाषा भाषी समर्थकों ने कई बार कहा है कि हिन्दी भाषा भाषियों को कोई सरकारी नौकरी तब तक नहीं मिलनी चाहिये जब तक कि वे देश की एक और भाषा में परीक्षा पास न कर लें । मैं अभी भी आप से कहना चाहता हूं कि हिन्दी भाषा भाषियों को कभी कोई सरकारी नौकरी नहीं मिलनी चाहिये जब तक कि वे हिन्दी भाषा के साथ साथ कम से कम एक और भारतीय भाषा में पारंगत न हो जायें . .

सभापति महोदय : इस प्रस्ताव का संबंध भाषा से नहीं है, लिपि से है ।

आचार्य कृपालानी : अगर वह इसका समर्थन कर दें, तो इन की स्पीच ही खत्म हो जायें ।

डा० गोविन्द दास : जहां तक लिपि का सम्बन्ध है मैं कहना चाहता हूं कि देश के एकीकरण के लिये एक लिपि की आवश्यकता है । यदि हमारी सभी भाषायें एक ही लिपि में लिखी जायें तो उन सब भाषाओं के साहित्य को हम अच्छी तरह से समझ सकेंगे ।

देवनागर पत्र का यहां जिक्र किया गया है । अभी भी संसदीय हिन्दी परिषद् के द्वारा त्रैमासिक देवनागर निकलता है और उस का बहुत बड़ा स्वागत हुआ है । देश में सर्वत्र ही उस का स्वागत हुआ है । जहां तक विरोध का सम्बन्ध है, मैं कहना चाहता हूं कि मैं प्रायः घूमता रहता हूं और इस सम्बन्ध में विचार विमर्श भी करता रहता हूं । मेरा

[डा० गोविन्द दास]

अपना अनुभव यह है कि देवनागरी लिपि का यदि कहीं विरोध आज है तो वह केवल इस देश के दो राज्यों में है, एक बंगाल में, जहां के विरोध को देख कर मुझे आश्चर्य होता है और दूसरे तमिलनाड में । बाकी प्रान्तों का

आचार्य कृपालानी : पंजाब का क्या हाल है ?

डा० गोविन्द दास : जहां तक पंजाब का सम्बन्ध है पंजाबी भाषा और हिन्दी भाषा का जो झगड़ा है वह बहुत सरलता के साथ निपट सकता है क्योंकि गुरुमुखी में और देवनागरी में कोई बहुत बड़ा अन्तर नहीं है । पंजाबी भाषी जो लोग हैं, वे अभी अपने विचार आप के सामने रख देंगे ।

चौ० रणवीर सिंह (रोहतक) : वहां झगड़ा पंजाबी सूबे के बारे में है ।

डा० गोविन्द दास : पंजाबी सूबे का भी झगड़ा है । भाषा का सम्बन्ध इस से बहुत कम है । उस में राजनीति है . . . .

श्री नरसिंहम् : राजनीति सब में आ सकती है ।

डा० गोविन्द दास : मेरा अनुभव यह है कि तामिलनाड और बंगाल को छोड़ कर बाकी देश में न लिपि को ले कर कोई विरोध है और न भाषा को ले कर ही । लोग दक्षिण को प्राय: देवनागरी लिपि के विरुद्ध बताते हैं । मैं कहना चाहता हूं कि आन्ध्र में मैं ने कभी कोई विरोध नहीं देखा है इस देवनागरी लिपि का मैं ने केरल में कोई विरोध नहीं देखा । मैंने कर्नाटक में कोई विरोध इस देवनागरी लिपि का नहीं देखा है । दक्षिण के चार राज्यों में से तीन राज्य देवनागरी लिपि के पक्ष में हैं । उत्तर भारत में भी मैं ने जैसा निवेदन किया एक बंगाल को छोड़ कर कहीं देवनागरी का विरोध नहीं है ।

हमारे माननीय सदस्य प्रकाशवीर शास्त्री जी ने बहुत स्पष्ट कहा है कि हम दूसरी भाषाओं की जो लिपियां हैं, उन के विरोधी नहीं हैं । हम उन का उतना ही आदर करते हैं, जितना कि देवनागरी का करते हैं । मैं तो आप से एक और बात कहना चाहता हूं कि यदि हम हिन्दी का प्रचार करना चाहते हैं तो एक तरफ हम को देवनागरी लिपि की आवश्यकता है तो दूसरी तरफ हम को इस बात की भी आवश्यकता है कि हिन्दी साहित्य भिन्न भिन्न भाषाओं की लिपियों में लिखा जाए । भिन्न भिन्न भाषाओंकी लिपियों में यदि हिन्दी साहित्य लिखा जाये तो उस का अधिक प्रचार होगा, ऐसा हमारा विश्वास है । इसलिये मैं कहना चाहता हूं कि जब हम देवनागरी लिपि को सब भाषाओं के लिये प्रयुक्त करना चाहते हैं तो इस का यह अर्थ नहीं है कि हम किसी भाषा के विरोधी हैं । सब भाषाओं के प्रति हमारी समान पूज्य भावना है, समान आदर है, समान श्रद्धा है । हम कोई रोमन लिपि के भी विरुद्ध नहीं है । कोई भी साहित्यकार किसी भाषा का, किसी लिपि का विरोधी नहीं हो सकता है । मुझे बहुत लोग , अनेक बार गलत समझते हैं । मैं हमेशा यह कहता रहा हूं कि अंग्रेजी भाषा का मैं भगत हूं, रोमन लिपि का भी मैं भक्त हूं । पर जिस तरह से गांधी जी कहा करते थे कि अंग्रेजी के वे मित्र हैं, पर अंग्रेजी राज इस देश में अस्वाभाविक है और उसे समाप्त होना चाहिये । उसी प्रकार मेरा कहना है कि हम को रोमन लिपि से भी प्रेम है, अंग्रेजी भाषा से भी प्रेम है, हम अंग्रेजी भाषा सीखें, रोमन लिपि सीखें, इस में कोई आपत्ति नहीं है, लेकिन जिस प्रकार अंग्रेजी राज्य इस देश में अस्वाभाविक था उसी प्रकार रोमन लिपि भी इस देश में अस्वाभाविक है और वह इतने पुराने और इतने सुसंस्कृत देश में कभी भी स्वीकृत नहीं हो सकती । वर्तमान परिस्थितियों को देखते हुए देश में अगर एकता लानी है एक दूसरे के साथ सम्पर्क बढ़ाना है और देश की हर भाषा के साहित्य को समझना है तो हम को एक लिपि की आवश्यकता है और

वह लिपि देवनागरी लिपि ही हो सकती है । उसी के साथ दूसरी जो लिपियां हैं, उन में भी हमारी श्रद्धा है, भक्ति है, और उन को भी हमें उसी आदर की दृष्टि से देखना है जिस आदर की दृष्टि से हम देवनागरी लिपि को देखते हैं ।

इन शब्दों के साथ मैं इस प्रस्ताव का हृदय से समर्थन करता हूं ।

श्रीमति लक्ष्मी बाई (विकाराबाद) : मुझे भी पांच मिनट बोलने के लिये, सभापति महोदय, दिये जायें ।

सभापति महोदय : बहुत अच्छा ।

Shri N. R. Muniswamy (Vellore): While appreciating the object that the hon Mover has in his mind in moving this resolution, namely that he wants to have a certain literary unity in this country rather than political unity—I think this is the view that he must have had in his mind—ultimately, I have to say that he has not stated the position correctly, as Acharya Kripalani has said. Not only should he live for twenty years more, but I wish that he lives for many more years to study the entire problem of India. So far as this aspect is concerned, I should say that he is immature, and the resolution that he has brought is inopportune, and it is going to create confusion which is already worse confounded. As it is, we have seen.....

Acharya Kripalani: We have already created confusion in you. And you are taking it seriously.

Shri N. R. Muniswamy: I have quoted Acharya Kripalani with a view to substantiate the stand that he has taken, but now he says that I have taken it very seriously. Unless we show some sort of sign of weakness or of strength in our case, we may not be able to put forth all our points in the best manner. From that point of view also, I am taking it seriously. It may be taken as light seriousness or serious seriousness. All the same, I have to say a few more things to oppose this resolution tooth and nail.

As Acharya Kripalani has said the Constitution provides for the spreading of the Hindi language and the development of the Indian languages. But the Hindi language itself is of recent origin, just about two hundred or three hundred years old. Although it has derived inspiration from Sanskrit which is about five thousand years old, still, it has to develop further. At present, it has not gone beyond its own circle. Dr. Govind Das is well-versed in Hindi, and he is trying his best to propagate Hindi, but he goes only within a radius of 200 or 300 miles. He never goes beyond that. That is the way in which he is spreading Hindi. I would request him to see the background of the Indian political situation.

The present time is inopportune for the change that is advocated for this reason namely that before developing the language itself with reverence, and at a time when the other languages are developing themselves, it is too early to think of changing the script. In the Western countries and in the East European countries, we have seen that all the languages are written in the Roman script. I do not thereby say that we should also have the Roman script, though my idea is that we must have the Roman script. When the Britishers were ruling this country, Hindi or Hindustani was the language that was used in the Army, because they knew the force behind it, and they were aware of the vibrating power that Hindi or Hindustani had got. How are they to learn it? Have you not seen in the Army that they are using the Hindustani and Hindi languages in Roman script? Why? Because it has got only 26 alphabets whereas in Hindi we have got as many 200 or 300. In Tamil there are 200. I am speaking of the alphabets. But with 26 alphabets, it is easy to work the entire scheme. You see in the tribal areas that they have resorted to the Roman script, because it is easy to learn. They write only in that script. For the present, we have got something in common in the English language. If you resort to these 26 alphabets, it will be a very good scheme, that is, adopting

[Shri N. R. Muniswamy]

the Roman script. But I say that is not possible, because we are allergic to the Roman script and the English language. As such, it is also inopportune on my part to insist upon having the Roman script.

But I say this much. At a time when we are thinking of regional languages, the Hindi language can never become the national language or official language. The only enemy of the Hindi language is the regional languages. In our States, it is the regional language that we want to develop. In Tamil Nad, it is Tamil, in Maharashtra, it is the Marathi language. You yourselves have created all this confusion; you yourselves created a scheme by which you are killing Hindi. After the constitution of linguistic States, it is the regional languages that they want to develop. You have given a blank cheque for that. So they would certainly have regional languages rather than think of Hindi or the Devnagri script. Whenever the States, want to communicate with the Central Government, they will resort to the English language, because English is already there as subsidiary. It is something which we have got alongside our regional languages, though it may not have sanction behind it under the Constitution.

So my hon. friend is having a very fine idea. Instead of coming through the front door, he wants to have it brought in and the Hindi language shoved on other people in an indirect way.

Acharya Kripalani: Very clever.

Shri N. R. Muniswamy: I do not quite catch what Acharya Kripalani has said. But I must also make my point and in doing so I must adduce arguments in my favour which may not be in his favour.

So I say the time is not ripe for us to think of this. First of all, let us develop the language. Only this morning, the Finance Minister said that we cannot make a child an adult in a short time. For that, some time must pass. Therefore, before you develop your own language and see the languages of other people, do not begin to expand it by change in script and have an ambitious plan to make it the language of the whole country. As a matter of fact, Tamil is supposed to be 5000 years old, older than Sanskrit. Its culture, tradition and enrichment are as vast as those of Sanskrit. Sanskrit has got a catholicity in that it has gone beyond India. But Tamil has remained confined to a limited area. It has not gone beyond that. But it has its own enrichment, tradition and literature, which are so vast and have yet to be fully explored.

Therefore, this is not the time for taking any such move as proposed by the hon. Mover. He has focussed the attention of Members on this so that they can give their opinions as regards accepting that principle. But it does not serve any useful purpose. He is doing a disservice to himself as well as to the language and to the whole of India in proceeding with this move. Before trying to introduce literary unity in the country, he must think of political unity. As Acharya Kripalani has said, this is not the time for accepting this proposal. Some chance should be given for a second thought, to decide whether to accept it or not.

Therfore, I would oppose this Resolution, and would press my amendment. Then again, he States have to be consulted. They may have their reasons. Unless we have their approval, we cannot impose it in an indirect way on them. Therefore, I would ask him to withdraw this Resolution so that this will fizzle out, without any need for me to press my amendment.

Shri Hem Barua (Gauhati): Apart from sentimental drapery cloaking the issue, the question that faces us today is whether we want a common script or not in the context of an

India emerging into freedom and nationhood. The opinion that goes counter to this is that India like a lotus and the different scripts and languages are like the petals of this lotus, and it is the individual fragrance of the petals that contributes to the composite fragrance of the lotus. But then we have to think of India as a whole. When we have to think of our India as a whole, we have to think about the emotional integration of this vast country, and what other people have succeeded in achieving, India should also succeed in achieving. Therefore, Gandhiji was right when he advocated a common script for all Indian languages in 1937, but it does not mean that that would result in obliterating the different Indian languages. He wanted the different Indian languages to live, blossom forth with all their wealth of associations, with all their traditions, with all their beauty, with all their charm. Therefore, we have to bear in mind that accepting a common script does not mean that we are trying to obliterate the existence or to dissipate the life and existence of other languages.

There are about 20 scripts in India, and there are more than 200 languages in India. The argument is this: if 200 languages could be written in 20 scripts, why could we not reduce the number of 20 script into one script. This is also true that there is apprehension that that if this is allowed, if a common script is accepted, that might mean the death of certain languages, but as far as I know, no language with a history of its own, with a tradition of its own, with a group of people speaking that language, ever dies. It cannot die.

We have to have that emotional integration as I have said, and I feel that if we adopt the Devanagiri script or any other common script, that would mean that the wealth, the cultural wealth, of the different languages becomes accessible to us. For instance, I have translated the great Tamil epic *Silappadigaram* into Assamese—the story of Kovalan and Kannagi. I had to translate that from English. If I had known the script, possibly I would have understood the language, because, basically speaking, all languages have a common source in India, and Rev. Tyssul Davies is right when he says that no soul, howsoever great, has appeared on the soil of India during the last 3,000 years who was not inspired by the philosophy or culture of Aryavarta. If this is so, there is a link, there is an association.

When I talk of this emotional integration, I want to cite the example of the Ottoman Empire. The Ottoman Empire existed for 500 years, but during this long history of 500 years, no attempt was made to integrate it socially or emotionally. The Turks ruled it. They were in a minority except in Anatolia, and there were the other races, the Arabs, the Kunds, the Armenians etc., but these were the people who were ruled by a minority, but that minority never thought of emotional and social integration of the people. It was Kamal Ataturk who had the vision, the wisdom, to think of consolidating that State in point of emotional integration, in point of social integration. Mere political and administrative integration is meaningless, unless and until political and administrative integration can draw its sap from emotional and social integration.

Gandhiji was a practical idealist, and that is why he talked of a common script as far back as 1937, but that was an age when we were not a divided people. We had a sense of urgency in us, a sense of nationhood in us, but now things have gone apart. And then, we think in different terms, and there is competition in coming up. That is quite natural. When freedom comes, there is urge, there is aspiration like that. But Gandhiji could visualise this picture, and that is why, while the whole nation was engaged strenuously in the fight for freedom, achieving freedom for this country, Gandhiji was constantly propagating the idea that there should

[Shri Hem Barua]

be a common script. Now, then Prof. Mukerjee has spoken of Roman script as a common script. The only argument that is advanced in favour of the Roman script is that if we accept the Roman script, then we become accessible to Europe and South East Asia. But Roman script does not fit into our phonetic system. As a phonetic proposition, it is a wrong proposition. But there might be a counter argument that we can write or use the Roman script with diacritical marks. But when diacritical marks are too many in a script, they not only involve a strenuous process in writing but also deface the beauty of the script. There may be another argument. We can write the Roman script without diacritical marks. If we do so, then we destroy our phonetic system, as Shri Shastri pointed out. I have heard the people making their announcements in the All India Radio and in the English news. They said Taroon Kanti Gause for Tarun Kanti Ghosh. This is because they use the Roman script. That is why it is vitiated.

Prof. Mukerjee has said that Devanagiri script is not a handsome script and that it does not have any beauty. But I for myself find a lot of beauty in it. It is the curves in letters of a particular script, as the curves in a woman's body, that add beauty to a script, and the Devanagiri script is rich beauty.

About the Roman script, let me quote from Shri Nehru's autobiography:

> "The success (of the Roman script) in Turkey and Central Asia had impressed me and the obvious arguments in its favour were weighty. But even so, I was not convinced. I knew well that it did not stand the faintest chance of being adopted in present-day India. There would be the most violent opposition to it from all groups, nationalist, religious, Hindu, Muslim, old and new. And I feel that the opposition would not be merely based on emotion."

Prof. Mukerjee said something about Urdu and the Persian script. Gandhiji advocated the learning of the Persian script and said that Hindi should be written both in the Persian and Devanagiri scripts. When Gandhiji wanted to learn both the scripts, he did not advocate the cause of the Urdu script to be recognised as the common script for all the Indian languages. On the other hand, in 1939, he advocated the cause of the Devanagiri script to be recognised as a common script for all the Indian languages. When he wanted us to learn both the scripts, we must not forget that India was one and was not partitioned into two States, as we are partitioned today and therefore, this solution was offered only as a neutral solution.

Shri Tangamani: You want a Hindu script.

Shri Hem Barua: This is not a Hindu script. If we have to adopt a common script, I would say that you should adopt Devanagiri script; because of its numerical superiority, it stands a better chance. If we say that India needs a common script, then because Devanagiri is the script of the official language of the Union, it stands a better chance. There is one merit also. Monier Williams calls it 'the most symmetrical and perfect alphabet in the world'. European Sanscritists are also of the opinion that Devanagiri alphabet is more perfect than any which obtains in Europe.

Whatever it might be, if it is decided that we should have a common script, I will say that Devanagiri scropt would be justifying its claim for recognition. But I would agree with Prof. Mukerjee on one thing. We must not hasten. We must not try to put

spokes into the wheels of speed because there is the danger that not only the spokes but the wheel might also collapse.

Therefore, Sir, I find the report of the Language Commission very enlightening. The report of the Language Commission says: "let the people learn the Devanagiri script, let them learn their own regional script also, both the scripts will be at their choice and in the process of history a common script will come". That is the Devnagiri script by common consent, as the Language Commission says, that will evolve and that will come to take its place.

I would, therefore, sound a note of caution. I would caution that we should not be in a hurry. We should not try to super-impose it in the interests of emotional or social integration immediately. But the process once started would take a shape of its own and I am confident that this would come.

17.46 hrs.

[MR. SPEAKER *in the Chair*]

I entirely agree with the comment in the report of the Official Language Commission where the members of the Commission have said:

> "We would therefore abjure any form of action savouring of compulsion in this behalf and advocate merely the use of the Devnagiri script for the writing of the regional languages at the option of the writer, so that the script may merely have currency alongside of the scripts in which the respective regional languages are written at present."

They have given a solution. They do not say that there should be compulsion so far as the acceptance of Devnagiri script is concerned. They say that the process might start but it must be left to the option of the writer in a particular language group. If it flourishes, if it takes a stride, let it flourish along with the regional script.

Therefore, Sir, let me conclude with the words: let there be no compulsion, let there be no hot haste, let there be no hurry and things would take their own course.

ज्ञानी गु० सिं० मुसाफिर (अमृतसर) : मि० स्पीकर, सर, जो प्रस्ताव शास्त्री जी ने इस वक्त हाउस के सामने पेश किया है, उस में जो स्पिरिट है देश की यकजहती की, उस को मैं मानता हूं और आज से बहुत साल पहले कांस्टीट्युएन्ट असेम्बली में, मेरा यह ख्याल है, सब से पहले मैं ने कहा था कि हमारी जितनी भी चीजें एक हो जायें, उस से हमारे देश की यकजहती बढ़ेगी । यदि सारे देश के लिये एक देवनागरी स्क्रिप्ट हो जाये, तो यह भी सारे देश-वासियों को एक सतह पर लाने का जरिया है । और मैं ने यह बात यूं ही नहीं कह दी थी । उस के पीछे शक्ति थी । जहां तक पंजाब का ताल्लुक है, जहां आज जबान और स्क्रिप्ट के सम्बन्ध में झगड़े कुछ तेज हैं, उस वक्त हालत यह थी कि पंजाब यूनिवर्सिटी की सीनेट की मीटिंग में जो लोग पंजाबी के हामी थे, उन्हों ने कहा था कि कोई स्क्रिप्ट हो जाये,—बेशक देवनागरी स्क्रिप्ट हो जाये, हमें इस पर कोई एतराज नहीं है, लेकिन जो हिन्दी के हामी थे, उन्हों ने नहीं माना था और वे मीटिंग से वाक आउट कर गये थे ।

Shri D. C. Sharma: I was in the Chair at that time.

ज्ञानी गु० सिं० मुसाफिर : शर्मा जी को फादर आफ यूनिवर्सिटी कहा जाता है । वह उस वक्त चेयर पर थे और वह बड़े इम्पार्टेंट मेम्बर यूनिवर्सिटी सीनेट के रहे हैं और अब भी हैं ।

मेरे कहने का मतलब यह है कि इस के पीछे एक शक्ति थी, एक ताकत थी । आज भी मैं महसूस करता हूं कि इस प्रस्ताव की जो स्पिरिट है, उस के साथ मैं इत्तिफाक करता हूं और यह भी मैं मानता हूं कि अगर किसी वक्त

[ज्ञानी गु० सिं० मुसाफिर]

हमारी खुशकिस्मती का यह मौका आये कि हम इस पर इत्तिफाक करें कि हमारे देश की एक लिपि होनी चाहिये, तो मैं समझता हूं कि वह देवनागरी लिपि ही है, जो ठीक हमारे देश के मुताबिक हो सकती है। जिस वक्त मैं ने इन ख्यालात का इजहार किया था, उस वक्त मेरे मन में यह गुमान तक भी न था कि हमारे देश में जबान की बिना पर भी कभी झगड़े हो सकते हैं। मजहब के नाम पर या और तरह से तो झगड़े हो सकते हैं, मगर लैंगुएज की बिना पर झगड़ों का हमें बिल्कुल ख्याल तक न था। जिस वक्त कांस्टिट्युएंट असेम्बली में देवनागरी स्क्रिप्ट में हिन्दी को राष्ट्रीय भाषा बनाने का सवाल था, उस वक्त हम बड़े तत्पर रहे और इतना ही नहीं बड़ी गर्मा गर्मी भी उस वक्त हुई। खुद हमारी पार्टी मीटिंग में बड़ी गर्मा गर्मी थी। शायद मेरे उस वक्त के साथी जानते ही होंगे कि एक आध वोट का ही फर्क रहा था। हम हिन्दी वालों के साथ पूरी तरह से सहमत थे। मगर वक्त गुजरता गया। उस वक्त जब मैं ने कांस्टीटुएंट असैम्बली में इस के हक में कहा तो बंगाल के भाई मेरे साथ बहुत नाराज हुए, तमिलनाड के भाई बहुत नाराज हुए और हमारे लीडर्ज में से भी कुछ ने मेरे इस रवैये पर नाराजगी का इजहार किया कि क्यों मैं ने बढ़ कर यह बात कह दी। मतलब यह कि नाराजगी को मैं ने मोल लिया। मैं आज महसूस करता हूं और मुझे कोई संकोच नहीं है कहने में कि हमारा अब भी यही कनविक्शन है। हम ने यह सब कुछ किया। मगर आज पंजाब में एक सैक्शन है जो कि हमारी जो अपनी जबान है जिस के मुताल्लिक हमारे जजबात हैं, जिस को हम बोलते हैं, जबान ही वह इन्कारी है। मुझे एक शेर याद आता है—

जमाने से अदावत का सबब थी दोस्ती जिनकी
उन्हीं को दुश्मनी हम से, जमाना इस को कहते हैं

कहने का मतलब यह है कि हालात ऐसे पैदा हो गये हैं कि अपनी जबान से ही इन्कार होने लग गया है।

मुझे उस वक्त का मामला भी याद है जब कि लैंगुएज कमिशन की रिपोर्ट पर हमारे दोनों हाउसिज जो हैं, उन की सभा बैठी थी। सेठ जी और दूसरे कई मैम्बर साहिबान उस के मैम्बर थे। आज मेरी जबान पर स्वर्गीय पन्त जी का नाम आता है। यह हमारी बदकिस्मती है कि एक एक करके वे लोग हमारे बीच से उठ गये हैं जो मामलों को सुलझा देने की शक्ति रखते थे। पहली मीटिंग में ही इस कद्र तनाव था लैंगुएज के मामले पर कि यह डर होता था कि शायद हम लड़ कर उठेंगे। सेठ जी, मैं और कुछ और साथी पन्त जी की कोठी पर इकट्ठा हुए तो कुछ बातें हम ने ऐसी कहीं कि जिस से यह मामला अच्छी तरह से सुलझ जाये। मैं समझता हूं कि पन्त जी उस वक्त अगर उस कमेटी के चेयरमैन न होते तो मेरा ख्याल नहीं कि ऐसी अच्छी रिपोर्ट जिस पर कोई खास डाइसेंट भी न लिखा जाये, हमारे सामने पेश की जा सकती थी। मैं समझता हूं कि सेठ जी मेरे साथ इस बात में सहमत होंगे।

डा० गोविन्द दास : बिल्कुल।

ज्ञानी गु० सिं० मुसाफिर : उस वक्त इस कद्र तनाव था। इस तनाव में और इस कशमकश के होते हुए क्या यह रेज्योलूशन आज पास हो सकता है और अगर हो सकता है तो इस पर अमल हो सकता है और क्या हम लोगों को इस के बारे में सहमत कर सकते है। अभी सेठ जी ने कहा कि बंगाल और एक और प्राविंस में इसका विरोध है। उन को टोकते हुए आचार्य कृपलानी ने कहा पंजाब की क्या हालत है। मैं नहीं समझता पंजाब के लोग जो एक वक्त इस के बारे में सहमत थे, आज वे इस बात के लिये सहमत होंगे कि गुरमुखी लिपि में जो पंजाबी लिखी जाती है, उसकी वे छोड़ दें। अगर मेरी राय अब भी यही है कि अगर कुछ हो सकता है, तो इस मामले में

हो । आज भी मेरा विश्वास वही है जो कि कांस्टीट्युएंट असैम्बली में जब यह मसला पेश हुआ था, उस वक्त था कि पंजाबी जबान गुरमुखी लिपि में ही ठीक लिखी जा सकती है । मगर मेरे अन्दर जो जजबात थे वे देश की यकजहती के थे, देश की यकजहती की ख्वाहिश थी और वह ख्वाहिश अब भी उसी तरह से मौजूद है जिस तरह से इस से पहले थी । इसलिये मैं कहता हूं कि देश की यकजहती के लिये आप एक लिपि की बात कहते हैं, हम तो सब कुछ कुर्बान कर सकते हैं, अगर देश में यकजहती आ सकती हो । जो भी कुर्बानी इस काम के लिये हमें करनी पड़े, उस को करने में हमें कोई उज्र नहीं है, कोई संकोच नहीं है । मगर यह देखना है और यह सोचना है कि इस प्रस्ताव को पास कर देने से क्या ऐसा हो सकता है ।

मैं तो यह कहूंगा कि इस प्रस्ताव का वक्त तब आयेगा जब इस को प्रकाशवीर शास्त्री जी नहीं पेश करेंगे बल्कि गुरुमुख सिंह मुसाफिर पेश करेगा और इस की ताईद बंगाल का कोई माननीय सदस्य या तामिलनाड का कोई माननीय सदस्य करेगा । उस वक्त यह प्रस्ताव [illegible]ना चाहिये । आज वक्त नहीं है, इस को लाने [illegible] यह जो प्रस्ताव लाया गया है अव्वल तो यह पास नहीं होगा और अगर पास हो भी जाये तो कागज का पुर्जा बन कर रह जायेगा, इस पर कोई अमल नहीं हो पायेगा । मुझे उम्मीद नहीं कि जो इस वक्त देवनागरी लिपि के हामी हैं, वे भी इस वक्त इस पोजीशन में हैं कि इस के हक में वोट दें । सरकारी पार्टी को तो छोड़ दीजिये । अपोजीशन ने भी जिन ख्यालात का इजहार किया है, उस से यह बिल्कुल साफ बात हो जाती है कि यह प्रस्ताव शायद पास नहीं हो सकेगा । और पास हो भी जाये तो इस वक्त इसपर अमल नहीं हो सकेगा ।

हमें देखना है कि कहां से कहां हम चले गये हैं । कब तो वह वक्त था जब कि मैं कांस्टीट्युएंट असैम्बली में खड़े हो कर कह सकता था कि यह चीज हो लेकिन आज यह हालत हो गई है यह सिर्फ पंजाब की बात नहीं है, असम की बात भी हमारे सामने है--कि जबान की बिना पर जब कि दूसरे मुल्कों ने यकजहती कर ली है, दूसरे मुल्क आपस में युनाइटेड हो गये हैं, हम इतने बदकिस्मत हैं कि हम लड़ाई झगड़े करते फिर रहे हैं । इस हद तक हम चले जाते हैं कि गोली, लाठी और बारूद की जरूरत हम को महसूस होती है और इस का सहारा हमारी सरकार को लेना पड़ता है ।

मूवर महोदय से मैं अर्ज करूंगा कि उन्हों ने अपने जजबात का इजहार कर लिया है और इस को अब वह वापिस ले लें क्योंकि इस वक्त इस पर अमल होने की गुंजाइश नहीं है । मैं अपनी राय को नहीं बतलाता हूं, यह ख्याल रहे । मेरे भाव वही हैं । वही सुलझे हुए मेरे ख्याल हैं । मैं पंजाबी जबान में लिखता हूं । यह वक्त की बात है कि पालिटिक्स की इस गर्दिश में मैं आ गया हूं वर्ना निजी तौर पर, व्यक्तिगत तौर पर, साहित्य लिखने की तरफ ही मेरा झुकाव है । मैं पंजाबी में लिखता हूं । पंजाब में हम पंजाबी और उर्दू भी जानते थे । उर्दू तो रही नहीं, इस वास्ते पंजाबी में ही किताबें लिख कर मैं अपने जजबात का इजहार कर लेता हूं । जबान के मुताल्लिक हमारे कुछ जजबात हैं और जब इधर उधर से जबान पर चोट होती है, तो थोड़ा सा महसूस होता है । मगर देश का ख्याल है, देश की यकजहती का ख्याल है और उसे हमें हमेशा मद्देनजर रखना है और वह रहा है । वह नम्बर १ पर रहा है । इसलिये जैसा मैं ने कहा कि देश की खातिर हम सब कुछ कुर्बान कर सकते हैं, मगर इस प्रस्ताव का मैं समझता हूं कि आज वक्त नहीं है और इस को वापिस ले लिया जाना चाहिये ।

Mr. Speaker: Shri Sampath.

Shri Sampath *rose*—

Some Hon. Members: The time may be extended.

Mr. Speaker: Do hon. Members want this to be continued on the next day?

Some Hon. Members: Yes.

Mr. Speaker: Very well. This will be continued on the next day.

18.00 hrs.

The Lok Sabha then adjourned till Eleven of the Clock on Monday, March 20, 1961/Phalguna 29, 1882 (Saka).